



2026:AHC:56288

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

आवेदन अंतर्गत धारा 528 बीएनएसएस संख्या - 6045 वर्ष 2026

योगेन्द्र सिंह यादव उर्फ योगेन्द्र यादव आवेदक(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य विपक्षी(गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता : नारायण सिंह (कुशवाहा)

विपक्षी (गण) के अधिवक्ता : शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या - 77

माननीय न्यायमूर्ति प्रवीण कुमार गिरि

1. आवेदकगण के विद्वान अधिवक्ता श्री नारायण सिंह (कुशवाहा) तथा राज्य के लिए विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता श्री पंकज कुमार को सुना।
2. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि उन्होंने भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 528 के अंतर्गत वर्तमान आवेदन उन राहतों हेतु प्रस्तुत किया है, जिनका उल्लेख आवेदन के प्रार्थना खंड में किया गया है। आवेदन में वर्णित राहतों का विवरण नीचे दिया गया है:-

"अतः, यह अत्यंत सम्मानपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय कृपापूर्वक इस आवेदन को स्वीकार करने और आवेदक के विरुद्ध सत्र वाद संख्या 1687 वर्ष 2025 (राज्य बनाम योगेन्द्र सिंह यादव), अंतर्गत धारा 352, 351(3) भारतीय न्याय संहिता 2023 एवं धारा 3(2)va अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (नृशंसता निवारण) अधिनियम 1989, जो विद्वान विशेष न्यायाधीश, एस.सी./एस.टी. अधिनियम, एटा के न्यायालय में लंबित है, की संपूर्ण कार्यवाही को निरस्त करने की कृपा करे; साथ ही विद्वान विशेष न्यायाधीश, एस.सी./एस.टी. अधिनियम, एटा द्वारा पारित आक्षेपित संज्ञान एवं सम्मन आदेश दिनांक 17.11.2025 तथा मुकदमा अपराध संख्या 121 वर्ष 2025, थाना रिजोर, जिला एटा से उद्भूत आक्षेपित आरोप पत्र संख्या 94 वर्ष 2025 दिनांक 19.08.2025, अंतर्गत धारा 352, 351(3) भारतीय न्याय संहिता 2023 एवं धारा 3(2)va अनुसूचित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



जाति एवं अनुसूचित जनजाति (नृशंसता निवारण) अधिनियम 1989 को भी निरस्त करने की कृपा करे।"

"यह आगे प्रार्थना की जाती है कि वर्तमान याचिका के लंबित रहने के दौरान, यह माननीय न्यायालय कृपापूर्वक आवेदक के विरुद्ध सत्र वाद संख्या 1687 वर्ष 2025 (राज्य बनाम योगेंद्र सिंह यादव), अंतर्गत धारा 352, 351(3) भारतीय न्याय संहिता 2023 एवं धारा 3(2)(va) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (नृशंसता निवारण) अधिनियम 1989, जो विद्वान विशेष न्यायाधीश, एस.सी./एस.टी. अधिनियम, एटा के न्यायालय में लंबित है, की अग्रिम कार्यवाही पर रोक लगाने की कृपा करे; तथा अन्य ऐसा आदेश या आदेश जो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में आवश्यक समझे जाएं, उन्हें भी पारित करने की कृपा करें।"

3. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि कथित घटना मनगढ़ंत तथ्यों पर आधारित है और आवेदक ने विपक्षी संख्या 2 को कोई धमकी नहीं दी है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया कि विवेचना अधिकारी ने धारा 352, 351(3) बी.एन.एस. और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (नृशंसता निवारण) अधिनियम 1989 की धारा 3(2)(va) के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत किया है, जो विवेचना के दौरान एकत्र की गई सामग्री के आधार पर लागू नहीं होते हैं। उन्होंने आगे यह भी कहा कि संज्ञान लेने से पूर्व, विचारण न्यायालय द्वारा आवेदक का पक्ष नहीं सुना गया, अतः दिनांक 17.11.2025 का संज्ञान आदेश निरस्त किए जाने योग्य है।

4. इसके विपरीत, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता का तर्क है कि आरोप पत्र के संक्षिप्त तथ्यों में यह उल्लेख किया गया है कि कथित घटना के संबंध में आवेदक द्वारा विपक्षी संख्या 2 को धमकी देने की एक ऑडियो रिकॉर्डिंग मौजूद है, जिसे पेन ड्राइव में एकत्र किया गया है। विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि आवेदक ने विपक्षी संख्या 2 की संपत्ति हड़पने के उद्देश्य से उसे धमकाया और उसकी जातिगत पहचान का उल्लेख करते हुए अपशब्दों का प्रयोग किया, इसलिए संबंधित धाराओं के तहत तैयार किया गया आरोप पत्र विधि सम्मत है और विद्वान विचारण न्यायालय ने भी कानून के अनुसार ही संज्ञान लिया है।

5. श्री पंकज कुमार, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता का तर्क है कि यह कानून का स्थापित सिद्धांत है कि **प्रथम सूचना रिपोर्ट घटना का कोई विश्वकोश नहीं है** और न ही इससे यह अपेक्षा की जाती है कि इसमें घटना के प्रत्येक पहलू का पूर्ण एवं कालानुक्रमिक विवरण शामिल हो, बल्कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रथम सूचना रिपोर्ट का मुख्य उद्देश्य पुलिस को किसी संज्ञेय अपराध के कारित होने के संबंध में सूचित करना है ताकि वे विवेचना प्रारंभ कर सकें। अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए, उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा वी.के. मिश्रा एवं अन्य बनाम उत्तराखंड राज्य एवं अन्य, (2015) 9 सुप्रीम कोर्ट केसेज 588, लतेश उर्फ दादू बाबूराव कर्लेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2018) 3 सुप्रीम कोर्ट केसेज 66, अमीश देवगन बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2021) 1 एससीसी 1 के मामलों में पारित निर्णयों पर भरोसा जताया है।

6. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि हाल ही में माननीय उच्चतम न्यायालय ने बी.एन. जॉन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, [2025] 1 एस.सी.आर. 12 : 2025 आईएनएससी 4 के मामले के पैराग्राफ 25 में अपने पूर्व के निर्णयों में प्रतिपादित कानून के उपरोक्त सिद्धांत को दोहराया है। त्वरित संदर्भ हेतु बी.एन. जॉन मामले (उपरोक्त) का प्रासंगिक पैराग्राफ संख्या 25 नीचे वर्णित है:-

"25. प्रथम सूचना रिपोर्ट में अपीलकर्ता द्वारा आपराधिक बल के प्रयोग या हमले का कोई आरोप नहीं है, जिससे कि भारतीय दंड संहिता की धारा 353 के प्रावधानों को लागू किया जा सके। यह स्मरण रखना आवश्यक है कि आपराधिक प्रक्रिया केवल प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होने के साथ ही शुरू होती है। यद्यपि प्रथम सूचना रिपोर्ट से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह घटना के सभी विस्तृत तथ्यों को समाहित करने वाला कोई विश्वकोश हो और यह केवल एक ऐसा दस्तावेज है जो आपराधिक कानूनी प्रक्रिया को सक्रिय और गतिशील बनाता है, फिर भी इसमें कथित रूप से किए गए अपराध की प्रकृति का खुलासा होना चाहिए, अन्यथा यह **भजन लाल मामले (उपरोक्त)** (निर्णय के पैरा 102 के खंड 1 देखें) में निर्धारित सिद्धांत के अनुसार निरस्त(quash) किए जाने योग्य होगी।"

इस न्यायालय ने सी.बी.आई. बनाम तपन कुमार सिंह, (2003) 6 एससीसी 175 में निम्नानुसार अवलोकन किया था:

"20. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट कोई विश्वकोश नहीं है, जिसमें रिपोर्ट किए गए अपराध से संबंधित सभी तथ्यों और विवरणों का खुलासा होना अनिवार्य हो। एक सूचनाकर्ता किसी अपराध के कारित होने के बारे में रिपोर्ट दर्ज करा सकता है, भले ही वह पीड़ित या हमलावर का नाम न जानता हो। उसे यह भी ज्ञात नहीं हो सकता है कि घटना कैसे हुई। एक प्रथम सूचनाकर्ता का अनिवार्य रूप से चश्मदीद गवाह होना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



आवश्यक नहीं है ताकि वह किए गए अपराध के सभी पहलुओं का विस्तृत विवरण दे सके। महत्वपूर्ण यह है कि दी गई जानकारी से किसी संज्ञेय अपराध के कारित होने का खुलासा होना चाहिए और इस प्रकार दर्ज की गई जानकारी पुलिस अधिकारी के लिए संज्ञेय अपराध के होने का संदेह करने का आधार प्रदान करने वाली होनी चाहिए। इस स्तर पर यह पर्याप्त है यदि पुलिस अधिकारी दी गई जानकारी के आधार पर संज्ञेय अपराध के होने का संदेह करता है, न कि यह कि उसे आश्वस्त या संतुष्ट होना चाहिए कि संज्ञेय अपराध किया गया है। यदि प्राप्त जानकारी के आधार पर उसके पास यह संदेह करने के कारण हैं कि संज्ञेय अपराध किया गया हो सकता है, तो वह जानकारी दर्ज करने और विवेचना करने के लिए बाध्य है। इस स्तर पर उसके लिए जानकारी की सत्यता के बारे में स्वयं को संतुष्ट करना भी आवश्यक नहीं है....."

(बल दिया गया)

7. विद्वान राज्य विधि अधिकारी ने आगे यह तर्क दिया है कि विवेचना के दौरान विवेचना अधिकारी द्वारा एकत्र की गई सामग्री को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के अंतर्गत तब तक साक्ष्य नहीं माना जा सकता, जब तक कि गवाहों की शपथ पर मुख्य परीक्षा के साथ-साथ प्रतिपरीक्षा न हो जाए और जो दस्तावेज उपलब्ध कराए गए हैं, उन्हें भी मामले के विचारण के दौरान गवाहों द्वारा सिद्ध न कर दिया जाए। उन्होंने आगे तर्क दिया कि आक्षेपित संज्ञान-सह-सम्मन आदेश में ऐसी कोई अनियमितता नहीं है, जो भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 507 के प्रावधानों के अनुसार आपराधिक कार्यवाही को दूषित करती हो। त्वरित संदर्भ हेतु धारा 507 भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता के प्रावधान नीचे वर्णित हैं:-

"धारा 507 - वे अनियमितताएं जो कार्यवाही को दूषित करती हैं- यदि कोई मजिस्ट्रेट, जो इस निमित्त कानून द्वारा सशक्त नहीं है, निम्नलिखित में से कोई भी कार्य करता है, अर्थात्:-

(क) धारा 85 के अंतर्गत संपत्ति की कुर्की और बिक्री करता है;

(ख) डाक प्राधिकारी की अभिरक्षा में किसी दस्तावेज, पार्सल या अन्य चीजों के लिए तलाशी-वारंट जारी करता है;

(ग) शांति बनाए रखने के लिए प्रतिभूति की मांग करता है;



(घ) सदाचार के लिए प्रतिभूति की मांग करता है;

(ङ) सदाचार के लिए कानूनी रूप से बाध्य किसी व्यक्ति को उन्मोचित करता है;

(च) शांति बनाए रखने के लिए निष्पादित बंधपत्र को रद्द करता है;

(छ) भरण-पोषण के लिए आदेश देता है;

(ज) स्थानीय उपताप के संबंध में धारा 152 के अंतर्गत आदेश देता है;

(झ) धारा 162 के अंतर्गत, किसी सार्वजनिक उपताप की पुनरावृत्ति या उसे जारी रखने को प्रतिषिद्ध करता है;

(ञ) अध्याय XI के भाग 'ग' या भाग 'घ' के अंतर्गत कोई आदेश देता है;

(ट) धारा 210 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अंतर्गत किसी अपराध का संज्ञान लेता है;

(ठ) किसी अपराधी का विचारण करता है;

(ड) किसी अपराधी का संक्षिप्त विचारण करता है;

(ढ) किसी अन्य मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित कार्यवाहियों के आधार पर, धारा 364 के अंतर्गत दंडादेश पारित करता है;

(ण) किसी अपील का निर्णय करता है;

(त) धारा 438 के अंतर्गत, कार्यवाहियों को मंगाता है; या

(थ) धारा 491 के अंतर्गत पारित किसी आदेश का पुनरीक्षण करता है, तो उसकी कार्यवाहियाँ शून्य होंगी।

8. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि विद्वान विशेष न्यायालय ने कानून के साथ-साथ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **गुजरात राज्य बनाम गिरीश राधाकृष्णन वर्दे, (2014)**

3 एससीसी 659 के मामले के पैराग्राफ संख्या 13 और 14 में निर्धारित कानून के अनुसार संज्ञान लिया है। पैराग्राफ संख्या 13 और 14 नीचे वर्णित हैं:

"13. किंतु यदि पुलिस द्वारा पुलिस स्टेशन पर धारा 154 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट के आधार पर मामला पंजीकृत किया गया है, न कि मजिस्ट्रेट के समक्ष धारा 190(क) दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत परिवाद के माध्यम से, तो स्पष्ट रूप



से दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट के संबंध में मजिस्ट्रेट द्वारा जांच नहीं की जा सकती, क्योंकि केवल पुलिस की विवेचना एजेंसी ही कानूनी रूप से विवेचना करने और उसके पश्चात आरोप-पत्र दाखिल करने की हकदार है; जब तक कि निश्चित रूप से मजिस्ट्रेट के समक्ष कोई परिवाद भी दर्ज न कराया गया हो, जहाँ परिवाद मामलों के लिए निर्धारित प्रक्रिया लागू होगी। हालाँकि, एक पुलिस मामले में, आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद, मामला मजिस्ट्रेट के पास इस संबंध में राय बनाने के लिए जाता है कि क्या यह संज्ञान लेने और मामले को विचारण हेतु सुपुर्द करने के लिए एक उपयुक्त मामला है, जो पुलिस के पास प्रथम सूचना रिपोर्ट के माध्यम से दर्ज कराया गया था; और विवेचना पूर्ण होने तथा पुलिस द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के बाद, मजिस्ट्रेट उस आरोप-पत्र में किसी भी धारा को न तो बाहर कर सकता है और न ही शामिल कर सकता है।

14. अतः, प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या शिकायतकर्ता/सूचनाकर्ता/अभियोजन को उपचार मांगने से वंचित कर दिया जाएगा, यदि विवेचना अधिकारियों ने प्रथम सूचना रिपोर्ट में प्रकट तथ्यों के बावजूद उन सभी धाराओं को शामिल न करके अपने कर्तव्य में चूक की हो, जिनके आधार पर अपराध बनता हुआ माना जा सकता है। इसका उत्तर स्पष्ट रूप से नकारात्मक ही होगा, क्योंकि अभियोजन को उन धाराओं के अपवर्जन को नजरअंदाज करके क्षति सहने की अनुमति नहीं दी जा सकती जो अपराध का गठन करती हैं, भले ही विवेचना अधिकारियों ने किसी भी कारणवश उन सभी अपराधों को आरोप-पत्र में शामिल न किया हो जो उस प्रथम सूचना रिपोर्ट पर आधारित थे जिस पर विवेचना की गई थी। किंतु तब एक और प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या इस कमी को उस मजिस्ट्रेट द्वारा भरने की अनुमति दी जा सकती है जिसके समक्ष आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद संज्ञान लेने हेतु मामला आता है; और जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, पुलिस रिपोर्ट पर आधारित मामले में मजिस्ट्रेट संज्ञान लेने के समय धाराओं को जोड़ या घटा नहीं सकता है, क्योंकि ऐसा करना विचारण न्यायालय के लिए केवल आरोप विरचित करने के समय ही अनुमेय होगा, जो कि स्थिति के अनुसार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 216, 218 या धारा 228 के अंतर्गत हो सकता है, जैसा भी मामला हो, इसका अर्थ यह है कि आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद, अभियोजन के लिए यह विकल्प खुला रहेगा कि वह उचित विचारण न्यायालय के समक्ष आरोप विरचित करने के चरण में यह तर्क दे और स्थापित करे कि दिए गए तथ्यों के आधार पर वे उचित धाराएं लगाई जानी चाहिए जिन्हें अभियोजन के अनुसार विरचित



किया जाना चाहिए। साथ ही, अभियुक्त के पास भी इस स्तर पर यह स्वतंत्रता होती है कि वह यह निवेदन कर सके कि किसी विशेष प्रावधान के अंतर्गत आरोप विरचित किया जाना चाहिए या नहीं; और पुलिस रिपोर्ट पर आधारित मामले में यह निर्धारित करने के लिए यही उचित मंच है कि क्या आरोप विरचित किया जा सकता है और विवेचना के दौरान एकत्र की गई सामग्री के साथ-साथ प्रथम सूचना रिपोर्ट और आरोप-पत्र में प्रकट तथ्यों के आधार पर किसी विशेष धारा को जोड़ा या हटाया जा सकता है।

(बल दिया गया)”

9. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि संज्ञान लेने के समय न्यायालय आरोप-पत्र में उल्लिखित किसी भी धारा को न तो जोड़ या घटा सकता है और न ही उसे अपवर्जित या सम्मिलित कर सकता है, क्योंकि ऐसा करना केवल आरोप विरचित करने के समय ही अनुमेय है।

10. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया है कि इस मामले में पूर्वोक्त धाराओं के अंतर्गत उल्लिखित अपराध सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय हैं और भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 250 (तत्स्थानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227) के अनुसार आरोप विरचित करने के समय अभियुक्त-आवेदकों को सुनवाई का अवसर दिया जाएगा।

11. त्वरित संदर्भ के लिए धारा 250 भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (तत्स्थानी धारा 227 दंड प्रक्रिया संहिता) नीचे उद्धृत की जा रही है:

“धारा 250. उन्मोचन - (1) अभियुक्त, धारा 232 के अंतर्गत मामले की सुपुर्दगी की तारीख से साठ दिनों की अवधि के भीतर उन्मोचन के लिए आवेदन प्रस्तुत कर सकता है।
(2) यदि, मामले के रिकॉर्ड और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने के पश्चात, तथा इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन के तर्कों को सुनने के बाद, न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेगा।”

12. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने गुजरात राज्य बनाम अफरोज़ मोहम्मद हसनफट्टा; (2019) 20 सुप्रीम कोर्ट केसेज 539 के मामले



में एक निर्णय पारित किया है, जिसमें न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह माना है कि सम्मन जारी करते समय, सम्मन आदेश में कारणों को अभिलिखित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रदीप एस. वोडेयार बनाम कर्नाटक राज्य, (2021) 19 सुप्रीम कोर्ट केसेज 62 में पारित अपने निर्णय के पैराग्राफ 91 में पूर्वोक्त निर्णय की पुष्टि की गई है। सुविधा हेतु प्रदीप एस. वोडेयार (उपरोक्त) में पारित प्रासंगिक पैराग्राफ संख्या 91 नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"91. पेप्सी फूड्स लिमिटेड (उपरोक्त) के निर्णय को इस आधार पर अलग करते हुए कि वह एक परिवाद मामले में संज्ञान लेने से संबंधित था, न्यायालय ने यह माना कि चूंकि पुलिस रिपोर्ट पर आधारित संज्ञान के मामले में मजिस्ट्रेट के पास सामग्रियों के अवलोकन का लाभ होता है, इसलिए उसे कारणों को अभिलिखित करने की आवश्यकता नहीं है: गुजरात राज्य बनाम अफरोज़ मोहम्मद हसनफट्टा (2019) 20 एससीसी 539 : (2020) 3 एससीसी (आपराधिक) 876।"

23. जहाँ तक पुलिस रिपोर्ट के आधार पर संज्ञान लेने का प्रश्न है, मजिस्ट्रेट के पास आरोप-पत्र, गवाहों के बयानों और विवेचना के दौरान पुलिस द्वारा एकत्र किए गए अन्य साक्ष्यों के अवलोकन का लाभ होता है। विवेचना अधिकारी/थाना प्रभारी, दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुपालन में और विवेचना के नियमों के अनुसार आवश्यक साक्ष्य एकत्र करते हैं। इस प्रकार एकत्र किए गए साक्ष्यों और सामग्रियों की विवेचना अधिकारी के स्तर पर सूक्ष्म जांच की जाती है और उसके पश्चात आरोप-पत्र दाखिल किया जाता है। उपयुक्त मामलों में, आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले लोक अभियोजक की राय भी ली जाती है। अतः न्यायालय के पास पुलिस रिपोर्ट के साथ-साथ पुलिस द्वारा उसके समक्ष रखी गई सामग्रियों के अवलोकन का लाभ होता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(ख) के अंतर्गत, जहाँ मजिस्ट्रेट ने पुलिस रिपोर्ट पर किसी अपराध का संज्ञान लिया है और मजिस्ट्रेट संतुष्ट है कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, तो मजिस्ट्रेट कार्यवाही शुरू करने (प्रक्रिया जारी करने) का निर्देश देता है। पुलिस रिपोर्ट पर आधारित अपराध का संज्ञान लेने के मामले में, मजिस्ट्रेट के लिए सम्मन या प्रक्रिया जारी करने के कारणों को अभिलिखित करना आवश्यक नहीं है। पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित मामलों में, मजिस्ट्रेट से केवल अभियुक्त को सम्मन जारी करने का आदेश पारित करने की अपेक्षा की जाती है।

अभियुक्त को सम्मन जारी करने का ऐसा आदेश मजिस्ट्रेट की उस संतुष्टि पर आधारित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



होता है, जो वह पुलिस रिपोर्ट और अन्य दस्तावेजों पर विचार करने के बाद और स्वयं को यह संतुष्ट करने के बाद प्राप्त करता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं। पुलिस रिपोर्ट पर आधारित मामले में, अभियुक्त को सम्मन जारी करने के चरण में मजिस्ट्रेट के लिए कोई कारण अभिलिखित करना आवश्यक नहीं है। हालांकि, यदि आरोप-पत्र कानून द्वारा वर्जित है, या जहाँ अधिकारिता का अभाव है, अथवा जब आरोप-पत्र को खारिज कर दिया जाता है या उसे फाइल पर नहीं लिया जाता है, तब मजिस्ट्रेट के लिए आरोप-पत्र को खारिज करने और उसे रिकॉर्ड पर न लेने के कारणों को अभिलिखित करना अनिवार्य है।

13. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने समय-समय पर यह निर्धारित किया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अधिकारिता का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को 'लघु विचारण' संचालित करने का अधिकार नहीं है। इस संबंध में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम अखिल शारदा और अन्य, (2023) 11 सुप्रीम कोर्ट केसेज 626, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम आर्यन सिंह और अन्य, (2023) 18 सुप्रीम कोर्ट केसेज 399 और नरेश अनेजा उर्फ नरेश कुमार अनेजा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2025) 2 सुप्रीम कोर्ट केसेज 604 में पारित निर्णयों का संदर्भ लिया जा सकता है। त्वरित संदर्भ हेतु अखिल शारदा और अन्य (उपरोक्त) के निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ संख्या 18 नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"18. माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश का परिशीलन करने के पश्चात, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर दिया है, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने वास्तव में एक 'लघु विचारण' संचालित किया है, जो इस स्तर पर और धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन का निर्णय करते समय अनुमेय नहीं है। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में अवलोकित और निर्धारित किया गया है, धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के क्षेत्राधिकार के प्रयोग में उच्च न्यायालय द्वारा कोई लघु विचारण आयोजित नहीं किया जा सकता है; और धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन पर निर्णय लेने के चरण में, उच्च न्यायालय विचाराधीन विशेष मामले के साक्ष्यों के मूल्यांकन में नहीं जा सकता है।"



14. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के साथ-साथ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय आक्षेपित संज्ञान-सह-सम्मान आदेश में ऐसी कोई अवैधता या त्रुटि नहीं पाता है, जिससे कि इस स्तर पर आवेदक को कोई राहत प्रदान की जा सके। इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में बार-बार यह निर्धारित किया गया है कि भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 528 के अंतर्गत अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते समय यह न्यायालय तथ्यों के विवादित प्रश्नों का निर्णय नहीं कर सकता है।

15. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता, इस स्तर पर, यह प्रस्तुत करते हैं कि आवेदक विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होना चाहता है और जमानत के लिए आवेदन दाखिल करना चाहता है, क्योंकि अपराध सात वर्ष तक की सजा से दंडनीय हैं।

16. यदि आवेदक 30 दिनों के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होते हैं, तो विचारण न्यायालय माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य; (2021) 10 एससीसी 773** के मामले में दिए गए निर्णय के अनुसार, कानून सम्मत तरीके से आवेदक के जमानत आवेदन पर शीघ्रता से विचार करेगा और निर्णय लेगा।

17. तदनुसार, आवेदन को **निस्तारित** किया जाता है और रिकॉर्ड में संरक्षित किया जाता है।

18. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अभियुक्त-आवेदक को भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 250 (तत्स्थानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227) के अंतर्गत आरोप विरचित करने के चरण में सुनवाई का अवसर प्राप्त होगा। आवेदक अपनी सभी शिकायतों/तर्कों को विचारण न्यायालय के समक्ष आरोप तय करने के चरण में उठा सकते हैं। विचारण न्यायालय विवेचना अधिकारी द्वारा एकत्र की गई सभी सामग्रियों का मूल्यांकन करेगा और आरोप विरचित करने के समय आवेदक के मामले पर पूरी तरह से कानून के अनुसार विचार करेगा।

19 मार्च, 2026

के.तिवारी

(न्यायमूर्ति प्रवीण कुमार गिरि)